महावीर की उन्मुक्त विचार-क्रान्तिः अनेकान्त-दर्शन

(डॉ. श्री. राजेन्द्रकुमार बंसल)

सत्यान्वेषण का आधार :

चेतन एवं जड़ जगत विविधता लिये हुये है । प्रत्येक पदार्थ का अपना-अपना स्वभाव या विशिष्ट गुण-धर्म होता है जिनकी परिसीमा में उनकी अवस्था में नित परिवर्तन होता रहता है । पदार्थों के गुण-धर्म की अवस्थाओं का परिवर्तन भी भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों के अनुसार विचार, चिंतन एवं अभिव्यक्ति का विषय बनता है । प्रत्येक व्यक्ति की ज्ञान-क्षमता, रुचि, प्रकृति एवं दृष्टिकोण आदि पृथक-पृथक होते हैं । इनकी विभिन्नता एवं विविधता एक सामान्य तथ्य है जबकि एकता-समानता अपवाद स्वरूप ही प्राप्त होती है ।

पदार्थों की स्वभावगत रहस्यात्मकता, परिवर्तनजन्य विविधता, विचित्रता एवं ज्ञाता के दृष्टिकोणों की भिन्नता आदि कारणों से पदार्थों का स्वरूप दृष्टिभेद एवं मतभेद का विषय बनता है । इसी कारण विश्व में वस्तु स्वरूप की यथार्थता के सम्बन्ध में विवाद मतभेद, विरोध, वैमनस्य एवं विषमता युक्त व्यवस्था सर्वत्र दिखायी देती है । वैचारिक स्तर पर एकांतवादी दृष्टिकोण एवं आग्रह के कारण ही मानव इतिहास की ऊषाकाल से लेकर अब तक विश्व में सर्वत्र अप्रिय एवं आत्मघाती घटनायें घटती रही हैं जिससे सत्यान्वेषण का मार्ग अवरुद्ध हुआ है और सत्य ज्ञान की परिधि के परे होता गया है । सत्य का उपासक पुजारी अज्ञानता के गह्वर में भ्रमित होता रहा है । अस्तु आत्मोत्थान एवं स्वच्छ सामाजिक सम्बन्धों की स्थापना हेतु वैचारिक क्षेत्र में उन्मुक्त चिंतन आवश्यक है ।

उन्मुक्त - चिंतन : आस्था की दिशा :

मन के विचार एवं चिंतन की प्रक्रिया स्वस्थ एवं उन्मुक्त हो, यह इस बात पर निर्भर करता है कि चेतन एवं जड़ जगत के स्वरूप तथा उनके सम्बन्धों के प्रति हमारी मान्यता कैसी है । यदि हमारी मान्यता वस्तु स्वरूप के अनंत गुण-धर्म एवं उनके परिवर्तनशील स्वरूप के अनुरूप हो, तो निश्चित ही हम यथार्थ सत्य के निकट होंगे । किन्तु यदि हमारी दृष्टि स्थूल रूप से वस्तुस्वरूप की मात्र बाह्य अवस्था पर ही हो और वह भी "करेले और नीम चढ़े" के अनुसार एकान्तिक आग्रहयुक्त हो तो जड़ चेतन पदार्थों के सम्बन्धों के प्रति हम अनभिज्ञ ही रहेंगे । ऐसी स्थिति में वस्तु स्वरूप का यथार्थ ज्ञान हमें नहीं हो सकेगा और हमारी स्थिति "कूपमण्डूक" जैसी होगी । इतना ही नहीं सत्यान्वेषण भी दृष्टि की विशालता के अभाव में असंभव है । सत्यान्वेषी व्यक्ति मानसिक धरातल पर विविध वैचाारिक प्रयोग वस्तुस्वरूप के अनेक धर्मात्मक स्वभाव के अनुसार उन्मुक्त चिंतन-पद्धति द्वारा करता है जिसे जैन दर्शन में अनेकांत दर्शन के नाम से सम्बोधित किया गया है ।

दृष्टा एक, दृष्टि अनेक : अनेकांत दर्शन :

जगत की प्रत्येक वस्तु अनंत गुण एवं धर्मात्मक है । गुण से तात्पर्य वस्तु के निरपेक्ष स्वभावरूप गुणों से है, जो बिना किसी अपेक्षा के वस्तु में विद्यमान रहते हैं और जिनकी अवस्थाओं मे सदैव परिवर्तन होता रहता है । जैसे आत्मा के ज्ञान, दर्शन, आनंद, सुख एवं शक्ति आदि ये गुण हैं । धर्म का तात्पर्य वस्तु के उन परस्पर विरोधी प्रतीत होने वाले गुणों से है जो सापेक्ष रूप से वस्तु में विद्यमान रहते हैं जैसे आत्मा की नित्यता-अनित्यता, वीतरागता-रागता एवं शुद्धता-अशुद्धता आदि । आत्मा के ये गुणरूप सापेक्षिक दृष्टि के विषय हैं ।

आत्मा नित्य (शाश्वत) होते हुये भी संसार अवस्था में देहाश्रित परिवर्तन की प्रक्रिया के कारण अनित्य भी है । इसी प्रकार स्वभाव दृष्टि से आत्मा वीतरागी, शुद्ध एवं अनंत ज्ञान से परिपूर्ण है किन्तु वर्तमान संसार अवस्था में यह रागी, अशुद्ध एवं अज्ञानी भी है । यह धर्म परस्पर विरोधी जैसे अवश्य प्रतीत होते है किन्तु यह विरोध वस्तु के स्वभाव के अनुसार संभाव्य स्तर तक ही होते हैं जैसे आत्मा की नित्यता एवं अनित्यता धर्म आदि, न कि चैतन्यता-अचैतन्यता । यहां यदि आत्मा अचैतन्यत्व को प्राप्त हो जावे तो वह अपना स्वभाव ही खो देगा, जो कभी संभव नहीं है ।

वस्तु के गुण-धर्मों की अवस्था में ऊर्ध्वगामी या अधोगामी चक्रीय परिवर्तन सदैव होते रहते है जिसका परिणाम विकास एवं पतन के रूप में दृष्टिगोचर होता है । वस्तु स्वभाव के कारण यह परिवर्तन अनायास न होकर क्रमबद्ध रूप से होता है । परिवर्तन की यह प्रक्रिया वस्तु के त्रिकाली गुण-धर्म की धुरी से संचालित होती है । दूसरे शब्दों में निरंतर परिवर्तनशील वस्तुएं अपने स्वभाव एवं सत्ता से विलग-विचलित नहीं होती । यही उनकी शाश्वतता एवं ध्रुवत्व का कारण है । वस्तु स्वभाव की इस विशेषता के कारण इसके सम्बन्ध में मतभेद पैदा होना स्वाभाविक है । यह मतभेद वस्तु स्वरूप में न होकर ज्ञाता की दृष्टि में होता है । वस्तु स्वरूप तो जैसा है, वैसा ही है । जब विशाल या अनेकांतवादी दृष्टि से उसका अवलोकन किया जाता है तब वस्तु स्वरूप के विराट सत्य का दर्शन हो जाता है अन्यथा नहीं । ऐकांतिक एवं आग्रही दृष्टि से वस्तु के सत्यांश का ही बोध हो पाता है । इस प्रकार वस्तु के अनंत गुण एवं धर्मों का बोध अनेक अनंत दृष्टिकोणों से ही हो सकता है । इसमें एक दृष्टा अनेक दृष्टियों से वस्तु स्वरूप को देखता है । यही अनेकांत दर्शन का उद्‌घोष है ।

विचित्र बातों से भरा हुआ है यह संसार ।
जयन्तसेन निज हित की, बात करो स्वीकार ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनेकांत का सैद्धान्तिक पहलू :

अनेकांत "अनेक" और "अंत" इन दो शब्दों से मिलकर बना है। अनेक का अर्थ है एक से अधिक, जो दो से लेकर अनंत संख्या तक हो सकते है। "अंत" का अर्थ वस्तु के गुण एवं धर्म से होता है। जब "अनेक" शब्द का उपयोग वस्तु के गुणों के संदर्भ में किया जाता है तब उसका तात्पर्य वस्तु के अनंत गुणों से होता है और तब "अनेक" शब्द का उपयोग दो के संदर्भ में किया जाता है तब उसका तात्पर्य वस्तु के दो विरोधी प्रतीत होने वाले धर्मों से होता है। इस प्रकार अनंत गुण तथा परस्पर विरुद्ध प्रतीत होने वाले दो धर्मों का एक ही वस्तु में सद्भाव स्वीकार करना अनेकांत है। व्यावहारिक दृष्टि से अनंत गुण-धर्म से युक्त जड़ चेतन वस्तुओं के सर्वअंश ज्ञान हेतु उन्हें अनेक एवं सम्पूर्ण दृष्टिकोणों से अवलोकन करना ही अनेकांत है।

वस्तु के गुण निरपेक्ष होते हैं, जिनका ज्ञान ऐकांतिक दृष्टिकोण या नय पद्धति से होता है। यह ऐकांतिक दृष्टि भी दो प्रकार की होती है। सम्यक् एकांत एवं मिथ्या एकांत। जब वस्तु के गुणों को सापेक्ष दृष्टिकोण (नय) से देखा जाता है तब वह सम्यक् एकांत कहलाता है और जब उन्हें निरपेक्ष दृष्टिकोण से देखा जाता है तो वह मिथ्या एकांत कहलाता है। सम्यक् एकांत से वस्तुस्वरूप के अंश का यथार्थ ज्ञान होता है जबकि मिथ्या एकांत से उसके अंश का अयथार्थ ज्ञान होता है क्योंकि इसमें अन्य गुणों का अभाव कर दिया जाता है। इसी प्रकार वस्तु के धर्म सापेक्ष होने के कारण अनेकांत दृष्टिकोण से ही उनका ज्ञान होता है।

अनेकांत भी सम्यक् अनेकांत एवं मिथ्या अनेकांत दो प्रकार होता है। जब वस्तु के विरोधी धर्मों को सापेक्षिक रूप से अनेक दृष्टिकोणों के संदर्भ मे देखा जाता है तब वह सम्यक् अनेकांत कहलाता है इसे जैनदर्शन में श्रुत प्रमाण कहा गया है और जब वस्तु के विरोधी धर्मों को निरपेक्ष रूप से अनेक दृष्टिकोणों के संदर्भ में देखा जाता है तब उसे मिथ्या अनेकांत कहते हैं जिसे प्रमाणाभास भी कहा जाता है। सम्यक् अनेकांत से वस्तुस्वरूप के विरोधी धर्मों का सापेक्ष ज्ञान होता है जो खण्ड-खण्ड सापेक्ष ज्ञान के अंशों से सर्वांश का बोध कराता है जबकि मिथ्या अनेकांत में दो विरोधी धर्मों का एक समय में अस्तित्व सम्भव न हो सकने के कारण वस्तुस्वरूप का लोप ही कर देता है।

अनेकांत - दर्शन द्वारा सर्वनयात्मक वस्तुस्वरूप का बोध :

एकांत और अनेकांत के उक्त वर्गीकरण को निम्न सूत्र द्वारा समझा जा सकता है जो सर्वनयात्मक वस्तु - स्वरूप का बोध कराता है :-

(१) **एकांत :**

सम्यक् एकांत (नय) = निरपेक्ष गुण + सापेक्ष-दृष्टिकोण

मिथ्या एकांत (नयाभास) = निरपेक्ष गुण + निरपेक्ष-दृष्टिकोण

(२) **अनेकांत :**

सम्यक् अनेकांत (प्रमाणज्ञान) = सापेक्ष धर्म (गुण) + सापेक्ष दृष्टिकोण समूह

मिथ्या अनेकांत (प्रमाणाभास) = सापेक्ष धर्म (गुण) + निरपेक्ष दृष्टिकोणसमूह

(३) **अनेकांत दर्शन :**

अनेकांत दर्शन (सर्वनयात्मक) = सम्यक् एकांत + सम्यक् अनेकांत

अनेकांत में अनेकांत :

उक्त विवचेन से स्पष्ट होता है कि गुणों की दृष्टि से वस्तु का स्वरूप सम्यक् एकांत एवं धर्मों की दृष्टि से सम्यक् अनेकांत होता है। जैन दर्शन में सम्यक् एकांत को नय (दृष्टि) एवं सम्यक अनेकांत को प्रमाण (ज्ञान) कहा जाता है। इस प्रकार वस्तु का स्वरूप सर्वथा अनेकांतवादी न होकर एकांतवादी भी है जो यह सिद्ध करता है कि जैनदर्शन अनेकांत में भी अनेकांत की व्यवस्था को स्वीकृत करता है। ऐसा न होने पर अनेकांत भी एकांत रूप हो जावेगा जो वस्तुस्वरूप के प्रतिकूल है क्योंकि वस्तु स्वरूप अनेकांतात्मक होने से सर्वनयात्मक होता है। अनेकांत दर्शन का सार इस तथ्य में गर्भित है कि वस्तुस्वरूप के सर्वअंश के ज्ञान हेतु उसे सापेक्ष रूप से ही ग्रहण करना चाहिये।

अनेकांत के भेद :

विविध एकांतवादियों के मध्य समन्वय हेतु अनेकांत-दर्शन के चार भेद वर्णित किये गये हैं जो इस प्रकार है :-

(१) कथंचित् नित्य, कथंचित् अनित्य

डॉ. राजेन्द्रकुमार बंसल
एम.ए., पी.एच.डी.,
एल.एल.बी.

आध्यात्मिक गूढ़ तत्वों से युक्त चिन्तनशील रचनाओं का जैन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशन। भगवान महावीर २५०० वें निर्वाण वर्ष में आपकी प्रेरणा से अहिंसा सेवा समिति का गठन। 'तीर्थंकर महावीर' स्मारिका का प्रकाशन। आपके प्रयत्नों से शहडोल में 'तीर्थंकर महावीर संग्रहालय एवं उद्यान' का निर्माण। कई जैन संस्थाओं के सदस्य, सलाहकार तथा पदाधिकारी। आपकी सेवा के लिए स्वर्णपदक पुरस्कृत।

सम्प्रति - कार्तिक प्रबंधन ओरियण्टल पेपर मिल्स, अमलाई (जिला. शहडौल)

दोलत की दो 'लत' बड़ी, समझे वही सुजान।
जयन्तसेन समझ बिना, दोलत से ही हान॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२) कथंचित् सामान्य, कथंचित् विशेष

(३) कथंचित् अवाच्य, कथंचित् वाच्य तथा

(४) कथंचित् सत् कथंचित् असत् ।

यहां पर कथंचित् शब्द का अर्थ "अपेक्षा या ऐसा भी है", से है । कथंचित् शब्द पूर्वाग्रह, दुराग्रह एवं हठवादिता को दूरकर वस्तु स्वरूप के विविध धर्मों के अस्तित्व को स्वीकृत करता है । जब हम वस्तु स्वरूप के त्रिकाली स्वभाव की ओर दृष्टिपात करते हैं तो वह हमें नित्य, सामान्य, अवाच्य एवं सत् स्वरूप दिखायी देता है जबकि अवस्था विशेष (पर्याय) की दृष्टि से वह अनित्य, विशेष वाच्य एवं असत् रूप में सामने आता है । यदि वस्तुस्वरूप के त्रिकाली स्वभाव या अवस्था विशेष को ही उनका स्वरूप मान लें तो वह एकांत दृष्टि होगी और हमें वस्तु स्वरूप का यथार्थ ज्ञान नहीं हो सकेगा । वस्तुतः वस्तु के स्वरूप में खण्ड या भेद नहीं होता है वह तो अखण्ड अभेद रूप है । भेद तो दृष्टिकोण में निहित होता है जिसका कारण आग्रह एवं ज्ञान की अल्पता है ।

विराट् सत्य का दर्शन :

अनेकांत दर्शन ज्ञान की अल्पता दूरकर पूरक का कार्य करता है । यह वस्तु के खण्डित ज्ञान अंश का समन्वय कर अखण्ड सत्य का यथार्थ बोध करता है । इस प्रकार अनेकांत दर्शन विवेकशील व्यक्ति का एक सशक्त उपकरण है जिसके माध्यम से विराट सत्य का दर्शन होता है । इसका संबंध विचार क्षेत्र से है जो चिंतन की प्रक्रिया द्वारा हमे सत्य के समीप पहुंचाता है । चिंतन विचार से आचरण निर्देशित एवं प्रभावित होने के कारण अनेकांत दर्शन अहिंसक एवं अपरिग्रही जीवन के लिये एक अनिवार्य शर्त है । इस दृष्टि से अनेकांत दर्शन वह केन्द्रबिन्दु है जो हमें न केवल सत्य के दर्शन कराता है किन्तु आत्मा के स्वरूप अर्थात् "धर्म" की प्राप्ति में एक विश्वसनीय एवं अपरिहार्य सहयोगी का कार्य करता है । वस्तुतः जीवन में धर्म का सूत्रपात ही अनेकांत दर्शन की स्वीकृति के साथ होता है जो अहिंसक जीवन का मूलभूत आधार है ।

स्वोन्मुखीवृत्ति एवं सामाजिक सहिष्णुता का उदय :

अनेकांत दर्शन से आध्यात्मिक एवं लौकिक दोनों उद्देश्यों की पूर्ति होती है । आध्यात्मिक दृष्टि से इसके द्वारा जड़ चेतन पदार्थों के स्वरूप का यथार्थ बोध होता है जिसके कारण आत्मस्वरूप की पहिचान, ज्ञान, अनुभूति एवं अनुरूप आचरण होता है । आत्मा की स्वमुखी वृत्ति का विकास होकर परोन्मुखी वृत्ति का परिहार होता है । इस प्रकार परोन्मुखी वृत्ति के जनक पर-पदार्थों के प्रति ममत्व भाव को तोड़ना अनेकांत दर्शन का प्रथम लक्ष्य है ।

लौकिक दृष्टि से अनेकांत दर्शन व्यक्ति एवं समाज के मध्य अंतर-बाह्य मतभेद एवं विवाद आदि का निराकरण, सामाजिक, सद्भाव एवं शांति की स्थापना में सहायक होता है । अनेकांत दर्शन के अप्रत्यक्ष प्रभाव का ही कारण है कि भारत में विविध प्रतिकूल संस्कृति, सभ्यता एवं मान्यता वाले व्यक्ति सहिष्णुतापूर्वक एक साथ रहने में समर्थ हो सके । इस प्रकार अनेकांत दर्शन जीवन में समन्वय दृष्टि प्रदान करता है जो इसका "उप उत्पाद" या गौण लक्ष्य है ।

तोड़ने-जोड़ने की द्वैध भूमिका :

अनेकांत दर्शन अध्यात्म के क्षेत्र में तोड़ने एवं लौकिक क्षेत्र में जोड़ने का कार्य करता है । अनेकांत की यह द्वैध भूमिकायें बाह्य दृष्टि से असंगत एवं विरोधी प्रतीत होती हुयी भी एक सिक्के के दो पहलू के समान हैं जो अनेकांत में अनेकांत का बोध कराती है । अखण्ड-अभेद ज्ञान स्वभावी आत्मा के त्रिकाली धर्म की प्राप्ति वर्तमान अज्ञान रूप खण्ड भेद दृष्टि को तोड़कर ही प्राप्त की जा सकती है और जब तक अनेकांत दर्शन द्वारा खण्ड-खण्ड ज्ञान को जोड़ा नहीं जाता तब तक अखण्ड परिपूर्ण ज्ञान का दर्शन संभव नहीं है । इस प्रकार विचार दृष्टि से अभेद-अखण्ड ज्ञान की प्राप्ति खण्ड-खण्ड एवं भेदज्ञान के समन्वय अर्थात् जोडने के द्वारा ही संभव है जो अंततः उस समन्वित खण्ड एवं भेदज्ञान को तोड़कर (अभावकर) ही प्राप्त होता है । चरम लक्ष्य की दृष्टि से खण्ड-खण्ड ज्ञान का जोड़ हेय या त्याज्य है जबकि समन्वित ज्ञान का सद्भाव उपादेय एवं सारभूत है । विचार प्रक्रिया की इतनी तीक्ष्ण एवं पैनी पद्धति अनेकांत दर्शन से ही सुलभ हो सकती है जो जिन शासन के विचार क्षेत्र का मूलाधार है ।

अनेक दृष्टाः अनेक दृष्टि :

विश्व ने युग परिवर्तन की प्रक्रिया में समय-समय पर अनेक महान विचारकों एवं सुधारकों को जन्म दिया है । उन्होंने अपने-अपने समय की समस्याओं के संदर्भ में चिंतन कर तत्कालीन अवस्था के संदर्भ में वस्तु स्वरूप की यथार्थता से विश्व को अवगत कराया । यह वस्तु स्वरूप परिवर्तन की प्रक्रिया में अवस्थात्मक दृष्टि से बदलता रहा जिसके कारण उसकी व्याख्या में भी परिवर्तन होता रहा । वस्तुस्वरूप की ये विविध व्याख्यायें कालांतर में एकांत वादी दृष्टिकोण के कारण मतभेद, विवाद एवं वैमनस्य का कारण बनी । हर एक विचारक एवं उनके अनुयायियों ने उनके द्वारा प्रतिपादित समर्थित वस्तु स्वरूप के एक अंश को ही पूर्ण सत्य मानकर "अपनी ढपली अपनी राग" अलापा । उस प्रवृत्ति के कारण मानव जगत विविध धर्म, सम्प्रदायों एवं वर्गपंथों में विभक्त होता गया किन्तु उसे परिपूर्ण सत्य के दर्शन नहीं हो सके । चैतन्य आत्म तत्त्व एवं विशाल जड़ जगत के यथार्थ दर्शन - ज्ञान से वह वंचित हो गया । यह प्रवृत्ति तीर्थंकर महावीर के जीवन काल में अपनी पराकाष्ठा पर थी ।

महावीर की देनः एकांत के बीहड़ में आत्मा की खोजः

तीर्थंकर महावीर के प्रतिपादन का केन्द्र बिन्दु आत्मा था । कोई विचारक आत्मा को नित्य कोई अनित्य और कोई क्षणिक मानता था । उन्होंने वस्तु स्वरूप के अनेकांत दर्शन को दृष्टिगत कर कहा कि आत्मा द्रव्य दृष्टि से नित्य, देह दृष्टि से अनित्य एवं पल प्रतिपल पर्याय परिवर्तन की दृष्टि से क्षणिक भी है । यदि एक दृष्टि से ही उसे देखा जायेगा तो सम्पूर्ण आत्मगुणों का ज्ञान नहीं हो सकेगा । इस प्रकार उन्होंने वस्तुस्वरूप के अनेकांत दर्शन को प्रतिपादित कर विविध मत-मतान्तरों

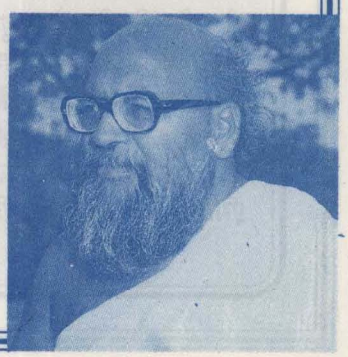

जितने जग में मनुज हैं, सब के भिन्न विचार ।
जयन्तसेन पन घट अति, स्वाद अनेक प्रकार ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं दृष्टिकोणों के मध्य समन्वय का मार्ग प्रस्तुत कर यथार्थ सम्यक् ज्ञान का बोध कराया । इसके माध्यम से महावीर ने विविध धर्मों, वर्गों, सम्प्रदायों एवं मत-मतान्तरों में विभक्त मानवता को एक सूत्र में पिरोने का सहज सरल एवं सर्वत्र सुलभ सूत्र समर्पित किया ।

अनेकांत दर्शन इस प्रकार वस्तु स्वरूप से सम्बन्धित मतभेद एवं विवाद आदि को दूरकर विविध दृष्टिकोणों को जोड़ने एवं समन्वित करने की उन्मुक्त वैचारिक क्रान्ति थी जिसके द्वारा वस्तु स्वरूप के खण्ड-खण्ड विभक्त ज्ञान का उपयोग उसकी समग्रता-सम्पूर्णता जानने हेतु किया जाने लगा और जिसके माध्यम से अखण्ड स्वरूप का ज्ञान उसके स्वभाव की परिपूर्णता के संदर्भ में संभव हुआ ।

अहिंसक जीवन का आधार :

आत्मा अपने ज्ञान स्वभाव में स्थिर रहे, यही उसका सहज शांत एवं अहिंसक भाव है । आत्मा में उठने वाले मोह, राग, द्वेष के परिणाम भाव-हिंसा है जबकि प्राणी को मारना, सताना, अंग-भंग करना आदि द्रव्य हिंसा कहलाता है । अहिंसक जीवन का प्रारम्भ स्वच्छ-निर्मल वैचारिक भाव भूमि से होता है । जब विचार एकांगी, आग्रही होते हैं तब जीवन भी तदनुसार व्यक्तिहित में केन्द्रित होकर हिंसक हो जाता है । ऐसे व्यक्ति के आचार में अहिंसा का प्रवेश होना अशक्य है । ठीक इसके विपरीत उन्मुक्त विचार चिंतन एवं अनेकांतिक दृष्टिकोण वाला व्यक्ति वस्तु स्वरूप की विराटता को सम्यक् रूप से समझते हुये मानसिक एवं सामाजिक धरातल पर सहज ही अहिंसक आचार पद्धति अपनाता हुआ अपरिग्रही जीवनयापन करता है । यही वह बिन्दु है जहां से जीवन में धर्म का प्रवेश होता है । इस दृष्टि से अनेकांतिक दर्शन से जीवन में अहिंसक आचार एवं अपरिग्रही जीवन को सशक्त आधार मिलता है, जो अन्यथा संभव नहीं है ।

सांसारिक समन्वय एवं एकता का सेतु :

अनेकांत दर्शन की उपादेयता वस्तुस्वरूप के यथार्थ ज्ञान तथा धार्मिक एवं साम्प्रदायिक मतभेदों के निराकरण तक ही सीमित नहीं है । जीवन के विस्तृत व्यवहार क्षेत्र में समन्वय एवं एकता की दृष्टि से यह चमत्कारी औषधि है । वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जबकि विश्व आर्थिक दृष्टि से पूंजीवाद एवं साम्यवाद तथा राजनैतिक दृष्टि से लोकतंत्र एवं अधिनायकत्व (तानाशाही) के द्वंद्व में फंसा हुआ है, अनेकांत दर्शन इन विरोधी विचारधाराओं के मध्य समन्वय हेतु प्रभावकारी सेतु है । आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में इन दोनों परस्पर विरोधी विचारधाराओं के विविध प्रयोग निर्ममता से मानवता के ऊपर किये जा रहे हैं । परस्पर अविश्वास एवं घृणा के वातावरण में समूची मानव जाति के चिरंतन विकास की गति अवरुद्ध हो गयी है । मानवीय महत्तम कल्याण के आदर्शों की ओट में मानव जीवन यंत्रवत् बन गया है । आत्म-वैभव एवं आत्मिकगुणों के विकास के स्थान पर भौतिक समृद्धि को वरीयता दी जा रही है ।

संघर्ष, स्पर्धा, अविश्वास, अवसरवाद एवं भौतिकवाद की लम्बी दौड़ में कब महानाश का बिन्दु मिल जावे, कोई कल्पना नहीं की सकती है । ऐसी स्थिति में "अनेक धर्मात्मक वस्तुस्वरूप पर आधारित उन्मुक्त चिंतन पद्धति युक्त अनेकांत दर्शन ही एक मात्र ऐसा समन्वयकारी मार्ग है जो सांसारिक मतभेद, विवाद, वैमनस्य एवं विषमता पूर्ण आचार-विचार की गहरी खाई पाटने की क्षमता रखता है और वस्तु स्वरूप का यथार्थ बोध कराकर आत्म-कल्याणकारी, अहिंसक, अपरिग्रही समाज व्यवस्था द्वारा सर्वोदय का ठोस आधार प्रस्तुत करता है । आवश्यक है कि मस्तिष्क के बन्द द्वार खोलकर हम मिथ्या, एकांतवादी एवं अज्ञानयुक्त दूषित वायु का निष्कासन करे और अनेकांत दर्शन की निर्मल विचार-ज्ञान-रश्मियों से अंतरतम को आलोकित होने दें तभी तीर्थंकर महावीर की, लोककल्याणकारी साधना होगी ।

मधुकर-मौक्तिक

भगवान् ने जो कहा है, वह सत्य है । असत्य बिल्कुल नहीं है । यहाँ तो प्रसंग आने पर हमें किसी सत्य की अनुभूति होती है । जब हम अरिहंत परमात्मा द्वारा प्रदत्त ज्ञान-चक्षुओं से इस जगत् को देखते हैं, तब यह अनुभव होता है कि अरिहंत से दूर रहने के कारण हम कितने दुःखी हो गये हैं । अरिहंत के निकट रह जाते तो दुःखी नहीं होते ।

– जैनाचार्य श्रीमद् जयंतसेनसूरि 'मधुकर'

हर व्यक्ति किसी-न-किसी को अपना साध्य बनाता है । हो सकता है, किसी का साध्य शुद्ध हो और किसी का अशुद्ध; पर साध्य हर एक जीव का होता ही है । किसी का साध्य अमृत है, किसी का जहर; पर साध्य हर एक का है । सभी अपना साध्य पाने के लिए प्रयत्नशील हैं ।

ज्ञानी कहते हैं कि यदि साध्य उल्टा है, तो काम भी उल्टा ही होगा और यदि साध्य सीधा है, तो काम भी सीधा ही होगा । हमारे लिए सीधा साध्य यदि कोई है, तो वे पंच परमेष्ठी ही हैं । यद्यपि हमारा साध्य सिद्ध पद है, फिर भी उस साध्य की स्थिति प्राप्त कराने वाले पंच परमेष्ठी हैं, इसलिए पंच परमेष्ठी भी साध्य है ।

– जैनाचार्य श्रीमद् जयंतसेनसूरि 'मधुकर'

अलंकरण है दान का, जिस मानव के पास ।
जयन्तसेन मिले उसे, यशोकीर्ति अधिवास ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org